International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 15
November 2017

डॉ० भीमराव अम्बेडकर के राजनीतिक विचारों का विश्लेषणात्मक अध्ययन

तिलकराज
शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग
महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक
Email : tilakrajpolitical@gmail.com

शोध–आलेख सार : भीमराव अम्बेडकर उदारवादी राजनीतिक दर्शन से प्रेरित थे। वे स्वतंत्रता, समानता, व भ्रातृत्व के सिद्धान्त को बहुत महत्वपूर्ण मानते थे और इस सिद्धान्त को उन्होंने अपने लेखों और पुस्तकों में भी महत्वपूर्ण स्थान दिया। डॉ० अम्बेडकर ने कहा था कि ''सकारात्मक दृष्टि से मेरा सामाजिक दर्शन तीन तत्वों में अन्तर्निहित कहा जा सकता – स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृत्व भाव। लेकिन किसी को यह नहीं सोचना चाहिए कि मैं अपने दर्शन में फ्रांस की राज्य क्रांति से प्रेरित हूँ। मेरे दर्शन की जडें धर्म में है न कि राजनीति में । मैंने इस दर्शन को शिक्षक बुद्ध की शिक्षाओं से ग्रहण किया है'' ।[1]

मुख्य–शब्द : उदारवादी, सामाजिक, स्वतंत्रता, समानता, भ्रातृत्व।

भूमिका : डॉ० अम्बेडकर को बीसवीं सदी के महान समाज सुधारक होने के साथ–साथ एक महान राजनीतिज्ञ भी माना जाता है। जिन्होंने अपनी मेहनत व लगन से भारतीय समाज में मूलभूत परिवर्तन करके लोगों की सामाजिक स्थिति में सुधार के साथ–साथ उन्हें राजनीतिक अधिकार भी दिलवाएं। उनके द्वारा लोगों के जीवन स्तर को ऊँचा उठाने के लिए किये गए कार्य के कारण ही उनका नाम भारतीय इतिहास में स्वर्णिम अक्षरों में अंकित हैं।[2]

शोध–प्रविधिः इस शोध–पत्र के लिए शोध सामग्री अधिकांश रूप में द्वितीयक स्रोतों से ग्रहण की गई हैं। इसमें ऐतिहासिक विश्लेषण व वर्णनात्मक दृष्टिकोण के साथ–साथ शोधकर्त्ता ने अपने व्यक्तिगत अनुभवों को भी स्थान दिया है। शोध सामग्री प्रसिद्ध पुस्तकों, पत्र–पत्रिकाओं व समाचार पत्रों से प्राप्त की गई हैं।

डॉ० अम्बेडकर के लोकतंत्र के सम्बन्ध में विचार

डॉ० अम्बेडकर लोकतंत्र को एक जीवन पद्धति मानते थे। उनका दृढ विश्वास था कि जब तक राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक क्षेत्र में विषमता समाप्त नहीं होगी तब तक लोकतंत्र की स्थापना अपने वास्तविक स्वरूप को ग्रहण नहीं कर सकती। उनका कहना था कि सामाजिक चेतना के अभाव में लोकतंत्र आत्माविहीन मृत देह के समान है और जब तक सामाजिक लोकतंत्र स्थापित नहीं होगा तब तक सामाजिक चेतना का विकास भी संभव नहीं है। उनका मानना था कि प्रत्येक को विकास के समान अवसर उपलब्ध कराना किसी समाज की प्रथम व अंतिम नैतिक जिम्मेदारी बनती है और अगर समाज इस दायित्व का निर्वहन नहीं कर सकता तो उसे बदल देना चाहिए।[3] डॉ० अम्बेडकर वैसे तो संसदीय लोकतंत्र में आस्था रखते

---

1 डॉ० अनुपमा सक्सैना, ''प्रमुख भारतीय राजनीतिक विचारक'' ज्ञानंदा प्रकाशन नई दिल्ली– 2001, पृ0 सं0 301

2 डब्लयू0 एन0 कुबेर ''आधुनिक भारत के राष्ट्र–निर्माता डॉ० भीमराव अम्बेडकर'' निदेशक प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार पटियाला हाऊस, नई दिल्ली–1996, पृ0 सं0 30।

3 डॉ० रितु सारस्वत ''अम्बेडकर के विचारों की प्रासंगिकता'' कुरूक्षेत्रा (ग्रामीण विकास को समर्पित) अंक–2, दिसम्बर 2015, पृ0 स0–16

थे परंतु भारत में व्याप्त विषमताओं व असमानतओं के परिप्रेक्ष्य में वे अध्यक्षात्मक शासन प्रणाली को संसदात्मक शासन प्रणाली से बेहतर मानते थे। क्योंकि उनके अनुसार इस प्रणाली के द्वारा शासन व्यवस्था प्रभावी होती है तथा यह राजनीतिक स्थिरता सुनिश्चित करती है। यह प्रणाली शक्ति पृथकीकरण के सिद्धांत पर आधारित होने के कारण सत्ता को विधायिका, कार्यपालिका व न्यायपालिका के बीच बाँटती है तथा बहुसंख्यकों की निरकुंशता पर रोक लगाती है।[4]

डॉ० अम्बेडकर संसदीय शासन प्रणाली के बहुत बडे प्रशंसक थे। उनके अनुसार संसदीय शासन प्रणाली तीन महत्वपूर्ण गुण पाऐ जाते है।

1. इसमें वंशानुगत शासन नहीं होता है।
2. इसमें कोई व्यक्ति सत्ता का प्रतीक नहीं होता।
3. निर्वाचित प्रतिनिधियों में जनता का विश्वास होना चाहिए।

डॉ० अम्बेडकर के अनुसार संसदीय लोकतंत्र में जनता के राजनीतिक अधिकारों की दुहाई तो दी जाती है किन्तु आर्थिक विषमता और निर्धनता को दूर करना का कोई खास प्रयास नहीं किया जाता। फिर बिना सामाजिक और आर्थिक लोकतंत्र के राजनीतिक लोकतंत्र सफल नहीं हो सकता । उनके अनुसार संसदीय लोकतंत्र की सफलता के लिए समाज में असमानताएं नहीं होनी चाहिए और सुदृढ विपक्षी दल का होना भी एक अपरिहार्य है। इसके साथ–साथ वे स्थाई सिविल सेवा और संवैधानिक नैतिकता को भी आवश्यक मानते है। उनका मानना था कि लोकतंत्र के नाम पर अल्पसंख्यकों पर बहुसंख्यकों की निरकुंशता नहीं होनी चाहिए। भारतीय लोकतंत्र के संदर्भ में विचार करते हुए डॉ० अम्बेडकर मानते थे कि लोगों में करिश्माती नेतृत्व के प्रति व्यक्ति पूजा, जाति प्रथा तथा सामाजिक विषमता आदि प्रवृत्तियाँ इसे कमजोर बनाती हैं।[5]

डॉ० अम्बेडकर उन सामाजिक व आर्थिक विषमताओं को लेकर सचेत थे जिन्होंने भारतीय लोगों की राष्ट्रीय चेतना को समाप्त कर दिया था। उन्होंने कहा ''हमें अपने राजनीतिक लोकतंत्र को एक सामाजिक लोकतंत्र भी बनाना चाहिए। राजनीतिक लोकतंत्र तब तक नहीं बन सकता जब तक कि उसके मूल में सामाजिक लोकतंत्र निहित न हो'' वे एक व्यक्ति एक वोट और एक मूल्य के सिद्धान्त को न केवल भारत के राजनीतिक जीवन में स्थापित करना चाहते थे बल्कि सामाजिक व आर्थिक जीवन में भी शामिल करना चाहते थे। अतः वे राजनीतिक लोकतंत्र व सामाजिक लोकतंत्र को एक साथ लाना चाहते थे।[6]

डॉ० अम्बेडकर के अनुसार राजनीतिक जनतंत्र चार आधार वाक्यों पर टिका हैं ।

1. व्यक्ति स्वंय में साध्य है।
2. व्यक्ति के कुछ अपृथक अधिकार होते हैं। जिनकी गारंटी संविधान द्वारा मिलती है।
3. किसी सुविधा को प्राप्त करने के लिए व्यक्ति के संवैधानिक अधिकारों का हनन नहीं करना चाहिए।

---

[4] डॉ० रामरत्न, डॉ० रूचि त्यागी ''भारतीय राजनीतिक चिंतन'' मयूर पेपर बैक्स नोएडा–2003, पृ0 सं0 343

[5] डॉ० बी0 एल0 फडिया ''आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन'' साहित्य भवन पब्लिकेशन आगरा पृ0 सं0 295

[6] डॉ० गुरप्रीत सिंह उप्पल, ''राष्ट्रीय अखण्डता को लेकर डॉ० अम्बेडकर का विजन'', वर्ल्ड फोक्स, जून 2015, पृ0 सं0 37

4. राज्य व्यक्तिगत तौर पर लोगों को ऐसे अधिकार नहीं देगा जिससे वे दूसरें लोगों पर शासन करें।

इस प्रकार व्यक्ति का सम्मान, राजनीतिक स्वतंत्रता, सामाजिक प्रगति, मानव अधिकार, संवैधानिक नैतिकता आदि डॉ० अम्बेडकर के राजनीतिक प्रजातंत्र के आवश्यक अंग है। जिसे डॉ० अम्बेडकर आधार प्लान कहते है। उनकी सम्मति में आधार प्लान का अर्थ किसी समुदाय के सामाजिक ढाँचें से है, जिसमें राजनीतिक योजना को व्यवहार में लाया जाता है।[7]

डॉ० अम्बेडकर के राष्ट्र एवं राष्ट्रवाद सम्बन्धी विचार

डॉ० अम्बेडकर के अनुसार राष्ट्रवाद वह विचारधारा है जो देश के प्रति प्रेम व भक्ति भावना पर आधारित है। उनका मानना है कि प्रत्येक देशभक्त व्यक्ति की ऐसी इच्छा होना स्वाभाविक है कि अपना देश वैभवशाली बनें, राष्ट्र सुखी व संपन्न हों, राष्ट्रीय उत्पादन बढे। अपने देश में बेकारी, भूखमरी, बेरोजगारी एवं अशांति न हो और आपसी झगडे समाप्त हों। साम्प्रदायिक, क्षेत्रीय भाषाई एवं जातीय संकुचितता से ऊपर उठकर लोग सोचें तो तभी हिन्दुस्तान एक समृद्ध राष्ट्र बन सकता है। राष्ट्र अपने राष्ट्रीय स्वरूप में आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक, वैज्ञानिक व शैक्षणिक सभी प्रकार के क्षेत्रों में लोक कल्याणकारी सिद्ध हों।[8]

डॉ० अम्बेडकर के अनुसार राष्ट्र जीवित ईकाई है। जब एक मानव समुदाय निश्चित भू–भाग पर निवास करते हुए उस भूमि के साथ आत्मीयता का अनुभव करने लगता है वह जीवन के विशिष्ट गुणों को आचरित करते हुए समान परम्परा व महत्वाकांक्षाओं से युक्त होता है। वह संगठित होकर अपनी श्रेष्ठ मूल्यों की स्थापना के लिए प्रेरित होता है। तब पृथ्वी के अन्य मानव समुदायों से भिन्न एक सांस्कृतिक जीवन प्रकट होता है। इस भावनात्मक स्वरूप को ही राष्ट्र कहा जाता है। जब तक यह राष्ट्रीय अस्मिता बनी रहती है, राष्ट्र जीवित रहता है। इसके कमजोर होने से राष्ट्र कमजोर होता है एवं इसके नष्ट होने से राष्ट्र नष्ट होता है। राष्ट्र की मूल प्रवृत्ति 'जन' है। यही जन अपनी मूल प्रवृत्ति के पोषण के लिए किसी भूखंड से संबंधित होता है। उस भूखंड के साथ उसका संबंध पुत्र एवं माँ के समान होता है। अपनी जीवन आधार मूल प्रकृति के समस्त पोषक तत्व उसे इस भूमि से ही मिलते है।

भारत, अमेरिका व आस्ट्रेलिया की तरह कालोनी नहीं है बल्कि जन्म देने वाली माँ व ईश्वर से भी बडी माँ है। डॉ० अम्बेडकर भारत को इसी रूप में माँ संज्ञा देते है उनके बौद्ध धर्म स्वीकार करने के पीछे काफी हद तक माँ एवं पुत्र की यह भावना भी थी। वे इस मूल प्रवृत्ति को जीवित रखते हुए दलित समाज को समर्थ, स्वावलंबी बनाना चाहते थे। उनके अनुसार राष्ट्रवाद को किसी भी रूप में परखा जाए, एवं कोई भी इसे त्यागने की इच्छा प्रकट करें पर राष्ट्रवाद एक ऐसा तथ्य बन चुका है कि इसे मानव समाज से अलग नहीं किया जा सकता है। उन्होंने कहा था कि राष्ट्रवाद एक ऐसा तथ्य है जिसको न तो भूलाया जा सकता न ही अस्वीकार किया जा सकता। इसमें एक ऐसी शक्ति निहित है जिससे अनेक साम्राज्य को छिन्न–भिन्न किया जा सकता है।[9]

---

[7] जी0 पी0 प्रशांत ''अम्बेडकर इन्कलाब'' हयूम्न सर्विस चेरिटेबल ट्रस्ट ऑफ इंडिया – 1997 पृ0 सं0 50

[8] डॉ० बी0 आर0 अम्बेडकर ''स्वराज हमारे ऊपर राज'' कंचन प्रकाशन, नई दिल्ली–2002 पृ0 सं0 87

[9] डॉ० बी0 आर0 अम्बेडकर ''पाकिस्तान और दी पार्टिशन ऑफ इंडिया'' ठाकर एण्ड कंपनी लि0 बम्बई –1946, पृ0 सं0 207

डॉ० अम्बेडकर राष्ट्रवाद और राष्ट्रीयता दोनों को अलग–अलग मनोवैज्ञानिक बातें मानते है। राष्ट्रीयता अपनत्व की चेतना व जातीय स्थिति की भावना है परंतु इसका मतलब यह नहीं है कि राष्ट्रवाद व राष्ट्रीयता दोनों बिल्कुल भिन्न–भिन्न बातें हो। बल्कि उनमें घनिष्ठ संबंध भी है। राष्ट्रीयता की भावना के बिना राष्ट्रवाद नहीं हो सकता । डॉ० अम्बेडकर के अनुसार राष्ट्रीयता निम्नलिखित दो बातों से राष्ट्रवाद कों जन्म देती है।

1. लोगों में एक राष्ट्र में रहने की इच्छा का जागरण होना चाहिए। राष्ट्रवाद इसी इच्छा का गत्यात्मक प्रदर्शन है।
2. उस इच्छा के लिए राष्ट्र का एक भौगोलिक क्षेत्र भी होना चाहिए जहाँ पर राष्ट्र का सांस्कृतिक घर भी बन सकें।

इस प्रकार भौगोलिक क्षेत्र के बिना राष्ट्रवाद उस आत्मा के समान है जो किसी शरीर की तालाश में इधर–उधर भटकती है। अतः राष्ट्र के रूप में रहने के एक दृढ इच्छा, एक निश्चित स्थान को एक सांस्कृतिक घर या राज्य बनाने की दृढ प्रतिज्ञा ही राष्ट्रवाद का सार है।

डॉ० अम्बेडकर भारतीय राष्ट्रवाद मे प्रबल आस्था रखते थे। इसको दृढ बनाने के लिए उन्होंने सामाजिक एकता पर बल दिया। उन्होंने कहा कि वे पहले भारतीय है, तब फिर हिन्दू, मुसलमान, सिंधी, कन्नड़ हैं। बल्कि यह सोचना चाहिए कि वे शुरू से अंत तक भारतीय है जिससे राष्ट्रीयता की भावना सुदृढ हो। उनके अनुसार एक सच्चे राष्ट्र के लिए दो बातों का होना जरूरी है। प्रथम राष्ट्र के संदर्भ में राष्ट्रवाद का मौलिक आधार सामाजिक एकता की दृढ भावना होनी चाहिए। इसके बिना राष्ट्रवाद स्थायी रूप से टिक नहीं सकता। द्वितीय अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में राष्ट्रवाद का आधार मानव प्रगति एवं भलाई होनी चाहिए। अन्यथा संकुचित राष्ट्रवाद संघर्ष एवं युद्धों को जन्म दे सकता है। इस प्रकार उनकी राष्ट्रीय भावना बहुत दृढ एवं गंभीर थी। वे पूर्ण रूप से एक सच्चे राष्ट्रवादी थे। उनकी राष्ट्रीय भावना का मूल आधार राष्ट्रीय सम्मान व सामाजिक एकता रही है।[10]

डॉ० अम्बेडकर के राजनीतिक दलों के सम्बन्ध में विचार

डॉ० अम्बेडकर राजनीति के मौलिक चिंतक होने के साथ–साथ उनमें राजनीति की विलक्षण प्रतिभा भी थी। वे राजनीति में व्यक्ति पूजा को हानिकारक मानते थे। वे इसे अधोगति में ले जाने वाला व अधिनायकवाद को आश्रय देने वाला मानते थे। वे व्यक्ति पूजा को गुलामी कारण मानते हुए कहते थे कि लोगों को नेताओं के प्रति विश्वास को भक्ति में नहीं बदलना चाहिए। क्योंकि भक्ति से अंधविश्वास व अंधविश्वास से पतन होता है। डॉ० अम्बेडकर किसी भी राजनीतिक दल की सफलता के लिए तीन बाते जरूरी मानते थे।

1. राजनीतिक दल के नेता को चरित्रवान होना चाहिए।
2. संगठन में अनुशासन का अत्यधिक महत्व होता है।
3. राजनीतिक दलों के पास ठोस एवं स्पष्ट कार्यक्रम होना चाहिए।

डॉ० अम्बेडकर के अनुसार बहुमत प्राप्त दल को मात्र अपनी पार्टी का हित चितंक न होकर आम जनता का ही चितंक होना चाहिए। वे देश हित को सर्वोपरि मानते हुए कहते है कि देश के भाग्य का निर्माण करते समय नेता, व्यक्ति एवं दल के महत्व की गणना नहीं करनी चाहिए। एक यथार्थवादी राजनीतिज्ञ होते हुए उन्होंने भारत चीन के मध्य पंचशील के समझौते पर टिप्पणी करते हुए कहा था कि राजनीति में विशेषकर अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में पंचशील के लिए कोई जगह नहीं है और इस बात की पुष्टि 1962 की चीन के साथ लडाई में हुई जब

[10] डॉ० बुद्धशरण हंस ''डॉ० अम्बेडकर के विचार'' अम्बेडकर मिशन पटना–1990, पृ0 सं0 103

भारत पर चीन ने सारी संधियों को ताक पर रखकर धोखे से आक्रमण किया। इस लडाई में भारत ने बुरी तरह से पराजित होकर सम्मान खोना पडा था।

वे इस बात के लिए भी चितिंत रहते थे कि अच्छे लोग राजनीति में आना नहीं चाहते इसलिए राजनीतिक दूषित हो रही है। वे राजनीति का उपयोग जनता के कल्याण के लिए करना चाहते थे। उनके अनुसार काल्पनिक आदर्श न अपनाकर व्यवहारिक आदर्श को अपनाना चाहिए।[11]

डॉ० अम्बेडकर के राज्य के सम्बन्ध में विचार

डॉ० अम्बेडकर राज्य को लोकतांत्रिक व्यवस्था में एक आवश्यक संस्था मानते थे। वे हीगल, हॉब्स, ग्रीन व बोसांके के इस विचार से सहमत नहीं थे जिसमें वे राज्य को एक साधन नहीं बल्कि साध्य मानते थे। डॉ० अम्बेडकर के अनुसार अशांति व विद्रोह के समय राज्य का उत्तरदायित्व बढ जाता है। वे समाज के साथ–साथ राज्य को भी उतना ही महत्व देते है। उनके अनुसार राज्य का प्रमुख कार्य समाज की आंतरिक अव्यवस्था व बाह्य आक्रमण से रक्षा करना है। राज्य का क्षेत्र होता है जिसमें उसकी गतिविधियां मान्य होती है। वे राज्य व्यवस्था को मानव–हित के दृष्टिकोण से देखते थे और वे राज्य को जन–साधारण की सेवा का माध्यम मानते थे। वे जनता का सरकार के प्रति आज्ञा–पालन का भाव आवश्यक मानते थे।

उनके अनुसार किसी भी विवेकेशील व्यक्ति के लिए यह असंभव है कि वह राज्य व्यवस्था को कायम रखने के लिए आज्ञा–पालन के महत्व को स्वीकार न करें। डॉ० अम्बेडकर के अनुसार राज्य के कानूनों में विश्वास न करना अराजकता में विश्वास करने के समान है। वे इस सिद्धान्त को स्वीकार करते थे कि वह सरकार उत्तम है जो कम से कम शासन करती है परंतु वे अराजकतावादियों के इस सिद्धान्त से सहमत नहीं थे कि वह सरकार उत्तम है जो सरकार बिल्कुल शासन नहीं करती। उनके अनुसार राज्य का संगठन सामाजिक गतिविधियों पर निर्भर है, जिसका मुख्य साध्य व्यक्ति व समाज की उन्नति है। वे मुसोलिनी की इस बात से भी सहमत नहीं थे कि ''सब कुछ राज्य के लिए है, राज्य के बाहर कुछ नहीं है और राज्य के विरूद्ध कुछ नहीं है''[12]

अम्बेडकर के धर्म संबंधी विचार

डॉ० अम्बेडकर धर्म व राज्य के आपसी संबंध के बारे में अपने विचार प्रकट करते हुए कहते हैं कि प्रत्येक नागरिक की अन्तकरण की स्वतंत्रता तथा किसी भी धर्म को मानने व उसका प्रचार करने की आजादी होनी चाहिए। किसी भी व्यक्ति को किसी भी धार्मिक समुदाय का जबरदस्ती सदस्य नहीं बनाना चाहिए। राज्य का अपना कोई राजधर्म नहीं होना चाहिए। वे धर्म–निरपेक्ष राज्य के समर्थक थे।[13]

डॉ० अम्बेडकर ने मनुष्य को बौद्धिक व सामाजिक प्राणी मानते हुए धर्म को मनुष्य के लिए आवश्यक माना है। धर्म एक सदाचार है जो मनुष्य और मनुष्य के बीच मानवीय संबंध स्थापित करता है। उनके अनुसार सच्चा धर्म वह है जो नियमों व कानूनों पर आश्रित न होकर आध्यात्मिक सिद्धान्तों पर आधारित हो। ये सिद्धान्त समाज के प्रत्येक नागरिक पर समान रूप से लागू हो। उन्होंने उस धर्म को धम्म की संज्ञा दी है जो धर्म विज्ञान व बौद्धिक तत्व पर

---

11 डॉ० बुद्धशरण हंस ''डॉ० अम्बेडकर के विचार'' अम्बेडकर मिशन पटना–1990, पृ0 सं0 95

12 डॉ० बी0 आर0 अम्बेडकर ''पाकिस्तान और दी पार्टिशन ऑफ इंडिया'' ठाकर एण्ड कंपनी लि0 बम्बई –1946, पृ0 सं0 294

13 डॉ० बी0 एल0 फडिया ''आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन'' साहित्य भवन पब्लिकेशन आगरा पृ0 सं0 296

आधारित हो। वे हिन्दू धर्म के घोर विरोधी थे। उन्होंने कहा कि जिस धर्म में मनुष्य के साथ मनुष्यता का व्यवहार करना मना है वह धर्म नहीं है। जिस धर्म में पशु को छूत व मनुष्य को अछूत समझा जाता है वह धर्म नहीं पागलपन है। उन्होंने हिन्दू धर्म में व्याप्त तीन दोषों का उल्लेख किया है।

1. इसने नैतिक जीवन यापन की स्वंत्रता के द्वारा बन्द कर दिए।
2. इसमें केवल उपदेशों का बाहुल्य है।
3. इसमें विभिन्न वर्गों और जातियों के लिए भिन्न–भिन्न नियम विधान हैं।

उन्होंने हिन्दू धर्म की परम्परागत व्यवस्था का आधार मनुस्मृति माना है।[14] वे बौद्ध को चुनने का कारण बताते हुए इस धर्म के तीन सिद्धान्तों पर प्रकाश डालते है जो किसी अन्य धर्म में नही पाये जाते।

पहला–प्रज्ञा यानि कि इष्ट–अनिष्ट से परे की समझ, दूसरा–करूणा और तीसरा–समता। डॉ० अम्बेडकर के अनुसार पृथ्वी पर अच्छे व खुशहाल जीवन के लिए प्रत्येक मानव द्वारा ये सिद्धान्त अपेक्षित होते हैं। उनका मानना था कि धर्म का इस्तेमाल लोगों के विभाजन करने के लिए इस्तेमाल नहीं किया जाना चाहिए बल्कि यह (धर्म) उनके बीच एकता का स्त्रोत होना चाहिए। धर्म भारत की राष्ट्रीय अखंडता के आडे नही आना चाहिए। उन्होंने धार्मिक सहिष्णुता की हिमायत की और धर्म तथा राष्ट्र के नाम पर हर प्रकार के पाखंड व अत्याचार की निंदा की।[15]

डॉ० अम्बेडकर ने यह स्पष्ट किया कि वे समाजवादियों एवं साम्यवादियों की तरह यह नहीं मानते कि धर्म अनावश्यक है। उन्होंने स्पष्टतापूर्वक कहा कि ''मैं मानता हूँ कि धर्म मानवता के लिए आवश्यक है, यदि धर्म समाप्त होगा तो समाज का भी पतन होगा। कोई भी सरकार मानवता की उस तरह से रक्षा या उसे अनुशासन बद्ध नहीं कर सकती जिस तरह नीति अथवा धर्म कर सकते है''। उनके अनुसार भारत में हिन्दुओं के कुछ समुदाय जैसे दलित एवं पिछडा वर्ग के द्वारा किसी अन्य धर्म की अपेक्षा बौद्ध धर्म को अपनाने की प्राथमिकता के तीन कारण बताए गए है।

1. बौद्ध धर्म कोई ऐसा धर्म नहीं है जो भारत के लिए अपरिचित हो।
2. बौद्ध धर्म का मूलभूत सिद्धान्त सामाजिक समानता है जो वे चाहते हैं।
3. बौद्ध धर्म एक तर्कसंगत धर्म है जिसमे अंधविश्वास का कोई स्थान नहीं है।[16]

डॉ० अम्बेडकर के धर्म परिवर्तन के इस संकल्प की व्यापक प्रतिक्रिया हुई। अनेक सवर्ण और दलित नेताओं ने इसकी आलोचना की। कुछ आलोचकों ने यह मत व्यक्त किया कि अस्पृश्यता मुख्यतः हिन्दू धर्म और समाज में ही व्याप्त है, अतः उसे हिन्दू धर्म में ही रहकर मिटाया जा सकता है। इस प्रकार धर्मांतर से अछूतों की स्थिति में कोई अंतर नहीं होगा।[17]

डॉ० अम्बेडकर के पाकिस्तान निर्माण संबंधी विचार

डॉ० अम्बेडकर ने अपनी पुस्तक को थॉट्स ऑन पाकिस्तान (1941) में भारत के विभाजन की समस्या पर विचार प्रकट करते हुए पाकिस्तान की माँग का समर्थन किया। उनके

---

[14] डॉ० अनुपमा सक्सैना, ''प्रमुख भारतीय राजनीतिक विचारक'' ज्ञानंदा प्रकाशन नई दिल्ली–2001, पृ0 सं0 314–315

[15] डॉ० गुरप्रीत सिंह उप्पल, ''राष्ट्रीय अखण्डता को लेकर डॉ० अम्बेडकर का विजन'', वर्ल्ड फोक्स, जून 2015, पृ0 सं0 36

[16] डॉ० नरेन्द्र जाधव ''डॉ० अम्बेडकर राजनीति धर्म और संविधान विचार'' प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली–2015, पृ0 सं0 217, 226

[17] गणेश मंत्री ''गांधी और अम्बेडकर'' प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली–2011, पृ0 सं0 239

अनुसार पाकिस्तान की माँग एक सांस्कृतिक समूह द्वारा अपने अलग विकास की माँग है, उन्होंने तर्क दिया कि यदि पृथक कर्नाटक व आंध्रप्रदेश की माँग दुखदायी नहीं है तो पृथक पाकिस्तान की माँग परेशानी का कारण क्यों मानी जाती है। पाकिस्तान की माँग का अर्थ है – एक राष्ट्र द्वारा अपने लिए एक अलग जगह। डॉ० अम्बेडकर के मतानुसार यदि किसी समुदाय में राष्ट्र के सभी तत्व मौजूद हैं तो वह एक पृथक राष्ट्र की माँग कर सकता है।[18]

डॉ० अम्बेडकर के अनुसार मुस्लमान एक अलग राष्ट्र है क्योंकि वे अपनी स्वतंत्र पहचान बनाए रखना चाहते है और अपने लिए आत्मनिर्णय का अधिकार माँग रहे है। उस समय पाकिस्तान की माँग के विरोध में एक तर्क यह भी दिया जा रहा था कि बटवारा होने के कारण भारत की प्राकृतिक सीमा पाकिस्तान मे चली जाएगी। इससे देश की सुरक्षा संकट में पड जाएगी। लेकिन वे इस तर्क से सहमत नहीं थे। उनका तर्क था कि प्राकृतिक सीमा न रहने से भारत की सुरक्षा में कोई खास क्षति नहीं होगी। उन्होंने लिखा है कि किसी एक सीमा को सबसे सुरक्षित मानना बिल्कुल उपयोगी नहीं है क्योंकि इसका सीधा कारण यह है कि भौगोलिक परिस्थितियां अब निर्णायक नहीं रह गई है क्योंकि तकनीकी विकास से नदी, पर्वत और जल विभाजक जैसी परांपरागत कसौटियों का महत्व अब काफी कम हो गया है।

हालांकि उन्होनें देश का विभाजन करके पाकिस्तान बनाने की बजाय एक वैकल्पिक योजना भी पेश की लेकिन तब तक पाकिस्तान मुस्लमानों की भावना का प्रश्न बन गया था। तब अम्बेडकर का मत था कि भारत में मुस्लिम समुदाय इतना बडा है कि उसे आत्म निर्णय का अधिकार मिलना ही चाहिए। अगर वे हिन्दू के साथ नहीं रहना चाहते तो उन्हें जबरन साथ रखना गलत है।[19]

अम्बेडकर और हिन्दू कोड बिल

डॉ० अम्बेडकर हिन्दू कोड बिल के प्रबल समर्थक थे। उन्होंनें समझाया कि हिन्दू कोड बिल का उद्देश्य हिन्दु कानून की कुछ शाखाओं को संशोधित व संहिताबद्ध करना है। उन्होंनें इस बिल के महत्व के बारे में विस्तार से बताते हुए कहा कि देश की एकजुटता की दृष्टि से यह लाभदायक होगा कि हिन्दुओं का सामाजिक व धार्मिक जीवन एक जैसे कानूनों से शासित हो। उन्होंनें कहा कि हिन्दू संहिता एक नागरिक संहिता की दिशा में सही कदम है।[20]

डॉ० अम्बेडकर ने उस समय उत्तराधिकार से संबंधित हिन्दू कानून की दो विभिन्न प्रणालियों का भी जिक्र किया जो कि मिताक्षर व दायभाग के नाम से जानी जाती थी। वे इन दोनों पद्धतियों में मूलभूत अंतर मानते थे। क्योंकि मिताक्षर के अनुसार एक हिन्दू की संपति उसकी व्यक्तिगत संपति नहीं है । यह वह संपति है जो एक समूह जिसमें पिता, पुत्र, पौत्र तथा प्रपौत्र के स्वामित्व में होती है। इन सब का उस संपति पर जन्म सिद्ध अधिकार होते हुए समूह के किसी व्यक्ति की मृत्यु होने पर उसकी संपति उत्तरजीविता (सर्वाइवरसिप) की व्यवस्था के तहत मृतक के उत्तराधिकारियों की बजाय समूह के बचे हुए सदस्यों के पास चली जाती है।

परंतु डॉ० अम्बेडकर द्वारा प्रस्तावित विधेयक में हिन्दू कोड दायभाग नियम अपनाता है जिसके तहत उपरोक्त मामले में मृतक सदस्य की संपति उसकी व्यक्तिगत संपति के रूप में उसके उत्तराधिकारी के स्वामित्व में चली जाएगी। इस प्रकार उत्ताधिकारी उस संपति उपहार या

---

18 डॉ० बी0 एल0 फडिया ''आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन'' साहित्य भवन पब्लिकेशन आगरा, पृ0 सं0 296

19 गणेश मंत्री ''गांधी और अम्बेडकर'' प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली–2011, पृ0 सं0 259, 261

20 डॉ० नरेन्द्र जाधव ''डॉ० अम्बेडकर राजनीति धर्म और संविधान विचार'' प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली–2015, पृ0 सं0 245

अपनी पसंद के किसी भी रूप में उस संपति को हंस्तांतरित करने या बेचने का पूर्ण अधिकारी होगा।[21]

इस प्रकार डॉ० अम्बेडकर का मानना था कि विवाह तथा उत्तराधिकार को छोडकर शेष सभी मामलों में एक सामान्य आचारसंहिता है तथा इसी कमी को पूरा करने के लिए उन्होंनें हिन्दू कोड बिल का मसौदा तैयार किया। जिसमें निम्नलिखित चार बातें विशेष रूप से लिखी गई।

1. जन्म के आधार पर अधिकार के सिद्धान्त की समाप्ति।
2. महिलाओं का संपति मे समान अधिकार।
3. पिता की संपति में पुत्री का समान अधिकार।
4. तलाक के मामलों में महिलाओं का समान अधिकार।

इस प्रकार हिन्दू कोड बिल को उसके मौलिक रूप में स्वीकार कर लिया जाता तो वह संविधान की धारा 15 के अनुरूप होता जिसमें जन्म तथा लिंग के आधार पर किसी के भी विरूद्ध भेदभाव की मनाही की गई है। उन्होंने अपनी चयनित कमेटी की 16 सदस्यों के साथ मिलकर हिन्दू कानून में समुचित संशोधनों का एक मसौदा बनाया। जिसे उन्होंने 12 अगस्त 1948 को एक प्रतिवेदन के रूप में संविधान सभा के समक्ष पेश किया। इसमें विवाह, तलाक, दत्तकग्रहण, नाबालिक, संयुक्त परिवार संपति व महिलाओं का संपति में उत्तराधिकार आदि समस्याओं से संबंधित सुधार के सुझाव दिये गए। जिसको बाद में हिन्दू कोड बिल का नाम दिया गया। लेकिन इस विधेयक का संसद के रूढिवादी सदस्यों, जिनमें कांग्रेसी भी शामिल थे, में इसका डटकर विरोध किया। प्रधानमंत्री पं० जवाहरलाल नेहरू ने भी अपने दल के सदस्यों को अपनी आत्मा के अनुसार इस विधेयक पर मतदान की अनुमति दे दी। अततः इस बिल को वापिस लेना पडा, जिससे डॉ० अम्बेडकर को गहरा आघात पहुंचा और उन्होंनें नेहरू मंत्रिमंडल से 25 सितम्बर 1951 को कानून मंत्री पद से इस्तीफा दे दिया।[22]

[21] डॉ० नरेन्द्र जाधव ''डॉ० अम्बेडकर राजनीति धर्म और संविधान विचार'' प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली–2015, पृ0 सं0 235

[22] डॉ० रामरतन, डॉ० रूचि त्यागी ''भारतीय राजनीतिक चिंतन'' मयूर पेपर बैक्स नोएडा–2003, पृ0 सं0 340–341